अध्याय 4

क़ानून के लंबे हाथ

पुलिस की शक्तियाँ और क़ानून लागू करने वाली एजेंसियां

सलीम एक पुरस्कार प्राप्त फ़ोटोग्राफ़र है जिसे उसके अख़बार ने बेंगलुरू के बाहरी इलाक़े में एक बस्ती में हो रहे एक विरोध प्रदर्शन को कवर करने के लिए भेजा था। यहाँ ठेका मज़दूर एक कंपनी द्वारा मनमाने तरीक़े से अपने ठेकों को रद्द किए जाने के ख़िलाफ़ जुलूस निकाल रहे थे। विरोध प्रदर्शन को कवर करने के दौरान सलीम ने देखा कि पुलिस आई और उसने आंदोलनकारियों को तितर-बितर होने के आदेश दिए।

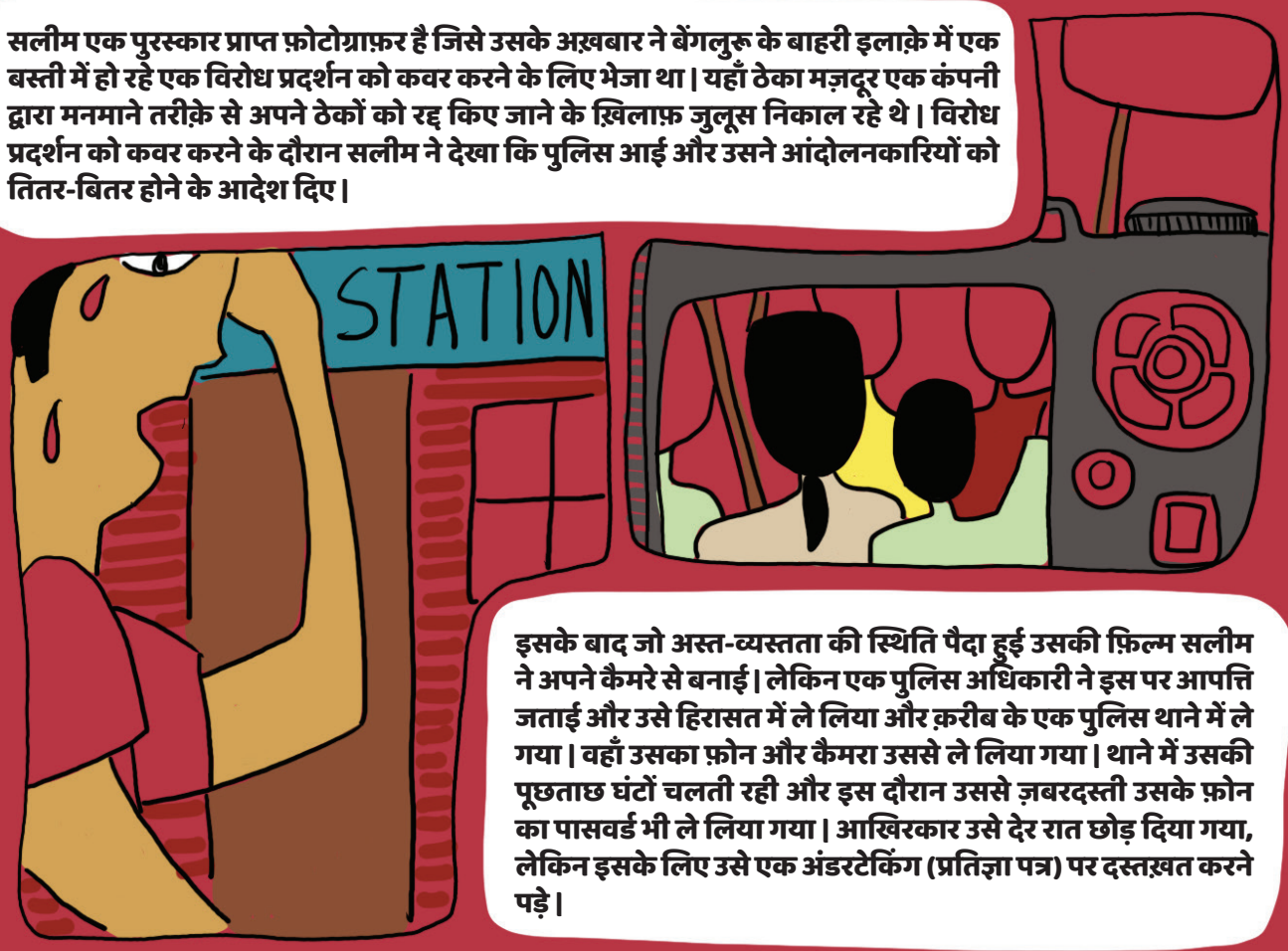

इसके बाद जो अस्त-व्यस्तता की स्थिति पैदा हुई उसकी फ़िल्म सलीम ने अपने कैमरे से बनाई। लेकिन एक पुलिस अधिकारी ने इस पर आपत्ति जताई और उसे हिरासत में ले लिया और क़रीब के एक पुलिस थाने में ले गया। वहाँ उसका फ़ोन और कैमरा उससे ले लिया गया। थाने में उसकी पूछताछ घंटों चलती रही और इस दौरान उससे ज़बरदस्ती उसके फ़ोन का पासवर्ड भी ले लिया गया। आखिरकार उसे देर रात छोड़ दिया गया, लेकिन इसके लिए उसे एक अंडरटेकिंग (प्रतिज्ञा पत्र) पर दस्तख़त करने पड़े।

ध्रुविका को अपने गुज़ारे के लिए लगातार दो नौकरियाँ करनी पड़ती थीं। उसके दिवंगत पिता ने कई क़र्ज़े ले रखे थे, जिसे ध्रुविका को चुकाने थे। इसके साथ-साथ उसको अपनी पढ़ाई की ख़ातिर लिए गए क़र्ज़े भी चुकाने थे और घर को चलाने में अपनी माँ की भी मदद करनी थी। ऐसे में जब क़र्ज़ देने वाली एक छोटी-सी कंपनी के एक एक्ज़ीक्यूटिव होने का दावा कर रहे रोहित नाम के एक आदमी का फ़ोन कॉल उसे मिला तो उसको सुखद आश्चर्य हुआ। रोहित ने उससे कहा कि उसकी कंपनी बहुत सस्ती ब्याज दरों पर एक घंटे के भीतर उसे 15 लाख रुपए क़र्ज़ पर देने को तैयार है। वह इस प्रस्ताव से आकर्षित थी, और वह अपना पैन कार्ड और अपने एक बैंक खाते के ब्योरे देने पर सहज ही राज़ी हो गई। उसके खाते में क़रीब 7 लाख रुपए थे। यह उसकी लिक्विड सेविंग थी। रोहित ने उसे बताया कि जल्दी ही उसे बैंक से एक मैसेज मिलेगा जिसमें रक़म हासिल होने की सूचना होगी और क़र्ज़े के दस्तावेज़ उसे एक लिंक के ज़रिए मिलेंगे जिनको पाने के लिए उसे उस लिंक पर क्लिक करना होगा।

उसने जैसे ही लिंक पर क्लिक किया, उसका फ़ोन हैंग कर गया, लेकिन अंत में उसके सामने एक पेज खुला जिस पर उसे कई तरह के दस्तावेज दिखाई दे रहे थे। उसे अपने बैंक से एक मैसेज भी मिला, जिसके बारे में उसे लगा कि यह उसे क़र्ज़े की रक़म मिलने के बारे में होगा। लेकिन बात ऐसी नहीं थी। मैसेज उलटे इस बारे में था कि उसके खाते से 6 |5 लाख रुपए 'हैलो किटी' के नाम भेज दिए गए थे। उसे समझ में नहीं आया कि वह क्या करे, उसने अपने बैंक को फ़ोन किया। उन्होंने कहा कि वे रक़म के इस ट्रांसफ़र को रद्द कर देंगे, लेकिन वे कोई कार्रवाई करने में नाकाम रहे। अगली सुबह जब वह बैंक की शाखा में पहुँची तो मैनेजर ने उससे पुलिस में शिकायत दर्ज कराने को कहा।

पूरे भारत में रोज़मर्रा के जीवन में लोगों के साथ जो कुछ होता है, सलीम और ध्रुविका की ये कहानियाँ उन घटनाओं से बहुत अलग नहीं हैं।

आपराधिक प्रक्रिया एक भूलभुलैया है जिससे निकल पाना तो दूर, उसे समझना ही नामुमकिन दिखाई देता है।

पुलिस, अदालतें और वकील, सभी ऐसे हाकिमों की तरह दिखाई जेते हैं जिनकी आज्ञा का पालन करने और उन पर भरोसा करने के अलावा कोई और उपाय नहीं हैं। और उन पर कभी कोई सवाल नहीं उठाया जा सकता है।

स्वाभाविक है कि हम जिस बात को नहीं जानते हैं, उस पर सवाल नहीं करना कोई समझदारी की बात नहीं है।

यहीं आकर हमारी यह चर्चा मददगार होगी। हम आपको वे सारी ज़रूरी बातें बताएँगे जो यह यक़ीनी बनाएँगी कि क़ानून के साथ आपका संबंध या संवाद कारगर हो सके।

कार्यवाही के पीछे का दर्शन

कई बार यह लग सकता है कि आपराधिक प्रक्रिया एक अंतहीन फंदा है, जिसमें अलग-अलग समय पर एक ही क़िस्म के सवाल बार-बार पूछे जाते हैं और वही जवाब दिए जाते हैं | इस अहसास में कुछ सच्चाई है, क्योंकि आख़िरकार यह प्रक्रिया इस एक सवाल का जवाब देने के मक़सद से काम करती है - क्या किसी व्यक्ति ने वह अपराध किया है या नहीं किया है जिसका आरोप लगाया जा रहा है |

जैसे-जैसे प्रक्रिया आगे बढ़ती है इस सवाल के साथ कानून का रिश्ता और बारीक होता जाता है | शुरुआती कार्रवाइयों के फ़ौरन बाद आरोप लगाने के दौरान सामग्री की गहराई से छानबीन की जाती है | इसमें यह देखा जाता है कि क्या इस सामग्री को क़ानूनी तौर पर स्वीकार किया जा सकता है | लेकिन इस अवस्था में अभी सामग्री की प्रामाणिकता पर संदेह नहीं किया जाता | मान लीजिए कि हर चीज़ सच है और अगर आपको लगता है कि आगे की कार्रवाई करने का कोई आधार नहीं है तब कार्यवाही वहीं रोक दीजिए और आरोपित को बरी कर दीजिए | अगर नहीं, तब आरोप लगाइए और सुनवाई के लिए ले जाइए जहाँ गवाह आएँगे और शपथ लेकर गवाही देंगे | हमने ऊपर जिस सवाल का ज़िक्र किया है, उसका पूरा जवाब सुनवाई के अंत में मिलता है, जब अदालत हर चीज़ को परखती है और ख़ुद से सवाल करती है कि क्या आरोप लगाने वाले पक्ष (अभियोजन) ने अपना मामला इस तरह साबित किया है कि किसी उचित या तर्कसंगत संदेह की कोई गुंजाइश नहीं बचती है | अगर हाँ, तब आरोपित को क़सूरवार ठहराया जाता है और उसे सजा सुनाई जाती है | अगर नहीं तब उसके ऊपर लगाए गए सारे आरोपों से उसे बरी करार दिया जाता है | बेशक प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ़आईआर) दर्ज करने से लेकर अंतिम फ़ैसले तक की इस यात्रा में आम तौर पर बरसों लग जाते हैं |

इस अध्याय में हम इस यात्रा पर चलेंगे ताकि इन चरणों को थोड़े बेहतर तरीक़े से समझ सकें | अंत में हम इस यात्रा को ख़त्म करके इसके एक तत्व पर करीबी नज़र डालेंगे जो आपराधिक न्याय प्रणाली का एक हिस्सा है |

क़ानून

हर सफ़र की ही तरह इस सफ़र में भी हमें नक़्शे की ज़रूरत होगी | इसके लिए हम क़ानून को एक नक़्शे की तरह लेंगे जो आपराधिक प्रक्रिया के इस सफ़र में हमारा मार्गदर्शन करेगा | हम सभी जानते हैं कि संविधान सबसे महत्वपूर्ण कानूनी दस्तावेज़ है | आपराधिक क़ानूनों की जब बात आती है तब भारतीय दंड संहिता 1860, आपराधिक विधि विधान 1973, और भारतीय प्रमाण अधिनियम 1872 की तिकड़ी संविधान को एक कड़ी टक्कर देते हैं | ये लिखित क़ानून पूरी आपराधिक प्रक्रिया का मूल तत्व बनाते हैं और आपराधिक प्रक्रिया के लिए रोज़मर्रा के नियम हैं | मौजूदा समय में सरकार ने नए क़ानूनों का मसौदा तैयार किया है जो इन तीनों क़ानूनों की जगह लेंगे और संसद में इन पर गौर किया जा रहा है | ये मसौदा क़ानून इतने अलग नहीं हैं कि इस अध्याय में प्रक्रिया की हमारी समझ में कोई रुकावट डालें |

भारतीय दंड संहिता (या आईपीसी) एक विशालकाय क़ानून है जिसमें पाँच सौ से ज़्यादा प्रावधान हैं | इसमें अनेक प्रकार के अपराधों के ब्योरे हैं, जिसमें मानव शरीर के ख़िलाफ़ अपराधों से लेकर संपत्ति के ख़िलाफ़ अपराध और न्यायिक प्रक्रिया के ख़िलाफ़ अपराधों तक शामिल हैं | आईपीसी को अपराधों का सामान्य क़ानून कहा जाता है | इसके पूरक के रूप में कई दूसरे क़ानून हैं जिनमें विशेष अपराधों के ब्योरे हैं और वे अपराधों के विशेष क़ानून कहलाते हैं |

इस महत्वपूर्ण आपराधिक कानून के साथ साथ आपराधिक विधि विधान 1973 (सीआरपीसी) और भारतीय प्रमाण अधिनियम 1872 (आईईए) हैं | सीआरपीसी इनमें से शायद सबसे महत्वपूर्ण है, जो जाँच-पड़ताल और अपराधों की सुनवाइयों के दौरान विधियों के ब्योरे देता है | एक ऐसी व्यवस्था में जहाँ सुनवाइयों को पूरा करने में ख़ासा वक़्त लेता है, ऐसे में गिरफ़्तारी और जमानत संबंधी क़ानून प्रक्रिया का वास्तविक केंद्र बिंदु बन जाते हैं | सीआरपीसी में इन्हें दर्ज किया गया है, जिनकी अदालतें करती हैं | जाँच-पड़ताल और सुनवाइयों के अलावा, सीआरपीसी में पुलिस की शक्तियों के बारे में नियम भी दिए गए हैं, जिसके तहत पुलिस दंगे या प्रदर्शनों जैसे 'उभरते हुए ख़तरों' से निबटने के लिए अस्थायी आदेश जारी कर सकती है |

क्या आप संविधान में दी गई कुछ सुरक्षा प्रावधानों (सेफगार्डों) की पहचान कर सकते हैं जो आपराधिक संदर्भों में लागू होते हों |

इन क़ानूनों के साथ-साथ, अदालतें अपने फ़ैसलों के ज़रिए भी दिशानिर्देश बनाती हैं जो क़ानूनी प्रक्रिया के लिए बाध्यकारी होते हैं, यानी क़ानूनी प्रक्रिया को उनका पालन करना ज़रूरी होता है | वे आपराधिक न्याय प्रणाली की पूरी व्यवस्था का हिस्सा बन जाते हैं |

प्रक्रिया की शुरुआत

क़दम 1 | आम तौर पर प्राथमिक सूचना रिपोर्ट (एफ़आईआर) दर्ज करने के साथ पुलिस की आपराधिक जाँच-पड़ताल शुरू होती है | इस मौक़े पर पुलिस आपकी शिकायत के आधार पर विभिन्न अपराधों की एक सूची तैयार करती है और आरोपित व्यक्तियों के नामों को दर्ज करती है (अगर कुछ व्यक्तियों को साफ़-साफ़ नामज़द बनाया गया है) | इसमें मामले के लिए जाँचकर्ता अधिकारी का नाम भी दर्ज किया जाता है | इसके बाद आपको अपना हस्ताक्षर करके सूचनाओं के सही होने की पुष्टि करनी पड़ती है |

एक पीड़ित के नाते आपको एफ़आईआर की एक प्रति बिना किसी शुल्क के हासिल करने का हक़ है | सैद्धांतिक रूप से पुलिस के पास जब भी ऐसे किसी अपराध की सूचना दी जाती है जिसकी जाँच-पड़ताल पुलिस बिना किसी पूर्व अनुमति के कर सकती है, इसके लिए पुलिस को एक एफ़आईआर दर्ज करना जरूरी होता है | व्यवहार में होता यह है कि एफ़आईआर अपने आप दर्ज नहीं होते |

क़दम 2 | अगर एक एफ़आईआर दर्ज हो जाए, तब पुलिस जाँच-पड़ताल शुरू करती है | एफ़आईआर में जिन आरोपों की बात की गई है, उनके लिए सबूत जुटाने के लिए पुलिस द्वारा उठाए गए क़दमों को तकनीकी तौर पर जाँच-पड़ताल (investigation) कहते हैं | सबूत जुटाने के लिए उठाए गए क़दमों में शामिल हैं - गिरफ़्तारियाँ, तलाशी, ज़ब्ती, गवाहों से पूछताछ | इस बात को लेकर कोई समयसीमा नहीं होती है कि जाँच-पड़ताल कितनी लंबी चल सकती है, समयसीमा सिर्फ़ तभी लागू होती है जब किसी संदिग्ध को गिरफ़्तार करके हिरासत में रखा गया हो | शुरुआती अवस्था के बाद सबूतों की गहराई से जाँच की जाती है और आरोप तय किए जाते हैं | इसमें यह भी देखा जाता है कि सामग्री क़ानूनी तौर पर स्वीकार्य है कि नहीं | लेकिन अभी भी इस पर संदेह नहीं किया जाता है कि सामग्री प्रमाणिक है या नहीं | अगर सब कुछ ठीक है, लेकिन सबूत पर्याप्त नहीं हैं तो जाँच-पड़ताल ख़त्म कर दी जाती है और आरोपित को छोड़ दिया जाता है |

फ़र्स्ट इन्फ़ॉर्मेशन रिपोर्ट या प्राथमिकी में एक यूनीक नंबर होता है, जिसको आप तारीख़ और पुलिस थाने के नाम के साथ नोट कर लें, क्योंकि मामले के बारे में भविष्य में इन सूचनाओं की ज़रूरत पड़ेगी |

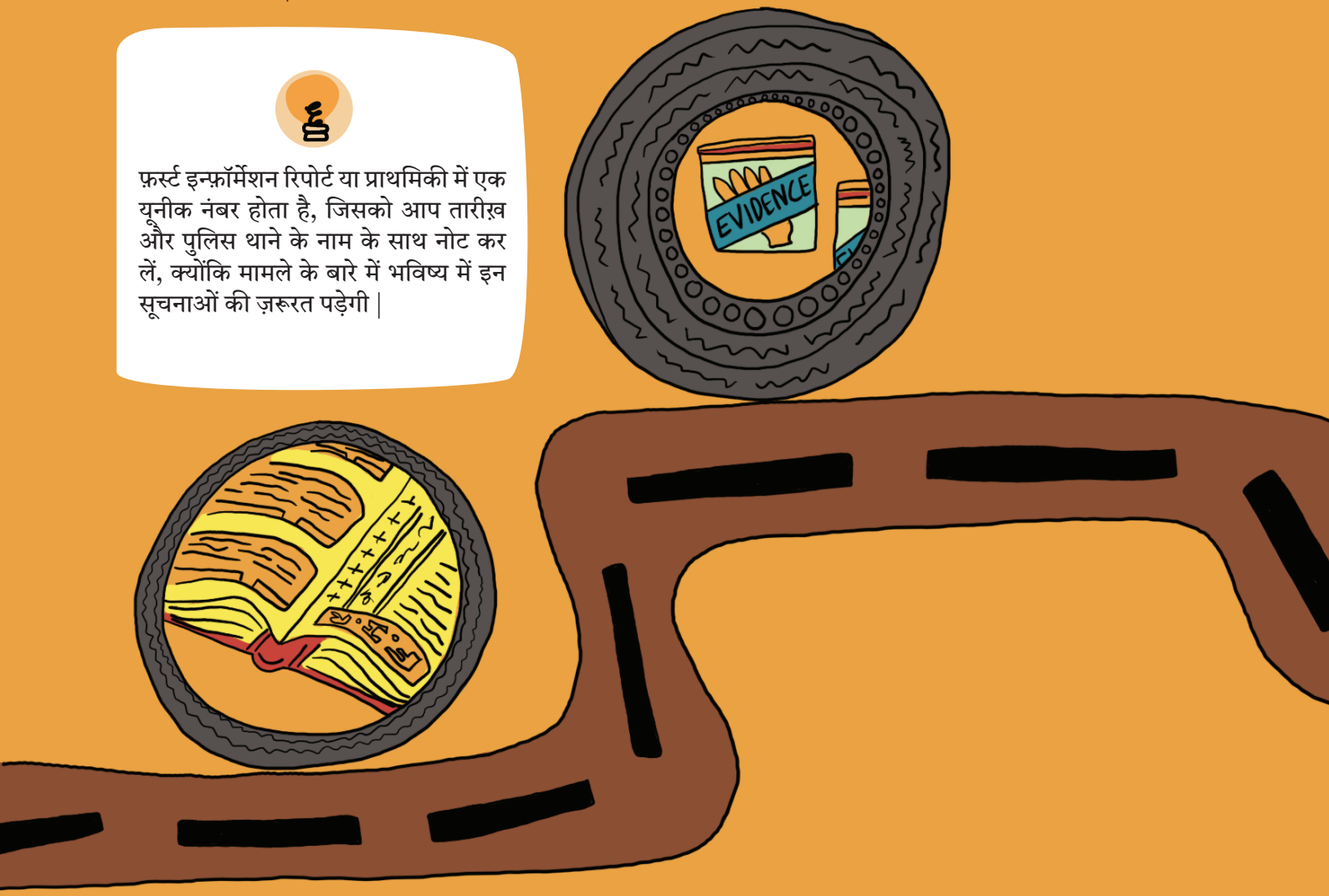

क़दम 3 | जब भी पुलिस एक जाँच-पड़ताल पूरी करती है, यह अदालत को एक रिपोर्ट सौंपती है जिसमें इसकी सिफ़ारिश होती है कि मामले को सुनवाई के लिए आगे बढ़ाया जाए या नहीं | पुलिस जब एक सकारात्मक सिफ़ारिश पेश करती है तब इस रिपोर्ट को एक “आरोपपत्र” कहा जाता है |

पुलिस सिर्फ़ एक सिफ़ारिश करती है कि मामले को आगे बढ़ाया जाए कि नहीं | मामले को आगे बढ़ाने का फ़ैसला आख़िरकार अदालत के ऊपर होता है जो पुलिस की सिफारिश से असहमत हो सकती है और आरोपित के ऊपर मुक़दमा चलाने से इन्कार भी कर सकती है |

क़दम 4 | इस सुनवाई के अंत में “सवाल” का पूरा-पूरा जवाब दिया जाता है, जहाँ अदालत से हर चीज़ को परखने की उम्मीद की जाती है | अदालत यह सवाल उठाती है कि क्या अभियोजन ने बिना किसी समुचित शक के अपना मामला साबित कर दिया है | अगर हाँ तब आरोपित को क़सूरवार ठहराया जाता है | अगर नहीं, तब उसे सारे आरोपों से बरी कर दिया जाता है |

ध्यान दें कि कुछ देशों के उलट भारत में क़सूरवार ठहराए जाने और बरी किए जाने दोनों क़िस्म के फैसलों के ख़िलाफ़ अपील की जा सकती है |

आपको याद है कि ऊपर हमने एक "सवाल" की बात कही थी? यह उन चरणों में से पहला चरण है जब प्रक्रिया में यह सवाल किया जाता है | यहीं आकर अगर दिखाए गए सबूत सरसरी तौर पर यह बताते हैं कि जो काम किया गया था वह असल में एक अपराध था, तब प्रक्रिया मुक़दमे या सुनवाई की ओर जाती है जहाँ गवाह आएँगे और शपथ लेकर गवाही देंगे |

इस सफ़र में अब इसके बाद आपको दो विकल्पों में से एक को चुनना ज़रूरी हो जाता है और हर स्थिति से जुड़ी आपराधिक प्रक्रिया के क़दमों को देखना होगा | ये दोनों विकल्प हैं:

क) अगर आरोप आपके ख़िलाफ़ लगाए गए हैं
ख) अगर आप आरोप लगाना चाहते हैं

क. अगर आरोप आपके ख़िलाफ़ लगाए गए हैं

भारतीय आपराधिक प्रक्रिया किसी आरोप के अभियुक्त को अधिकार देती है, लेकिन यह जानना बुद्धिमानी होगी कि सारी बातें पुलिस के हाथ में होती है और आपको सतर्क रहना चाहिए और मूल समस्या पर ध्यान देना चाहिए | आइए सुनवाई से पहले के चरणों को देखें और इसके बाद सुनवाई के चरणों की बात करेंगे |

भारत में एक पुलिस छानबीन किसी व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता को लेकर भारी ख़तरे पैदा कर सकती है, क्योंकि पुलिस के पास बिना न्यायिक वारंट के गिरफ़्तार करने की व्यापक शक्तियाँ हैं | कई अपराधों को "गैर-ज़मानती" बताया गया है, यानी उनमें गिरफ़्तार होने पर ज़मानत पाने का अधिकार नहीं है, बल्कि इसका फ़ैसला अदालतों के विशेषाधिकार के ऊपर निर्भर करता है | अपनी स्वतंत्रता के प्रति खतरों को बेहतर तरीक़े से समझने के लिए आपके लिए अपने ख़िलाफ़ दायर एफ़आईआर को हासिल करना और उसका अध्ययन करना ज़रूरी है |

याद रखें कि अनेक राज्यों में पुलिस अब एफ़आईआर की प्रतियों को ऑनलाइन उपलब्ध कराती है | इसके अलावा मामला जिस स्थानीय अदालत के अधीन आता है उससे इसकी एक प्रति हासिल करने के लिए क़दम उठाए जा सकते हैं |

पता लगाएँ कि आपका स्थानीय थाना एफ़आईआर को ऑनलाइन उपलब्ध कराता है कि नहीं | आपको एफ़आईआर में कौन से तत्व साझे दिखाई देते हैं |

गिरफ़्तारी से बचने के लिए सीआरपीसी में "अग्रिम जमानत" का एक उपाय मुहैया कराया गया है | व्यवहार में इसका नतीजा यह होता है कि पुलिस आपको हिरासत में नहीं ले सकेगी | लेकिन याद रखें कि आप इस उपाय का सीधे-सीधे लाभ नहीं उठा सकते हैं | अदालत हरेक मामले पर उसके तथ्यों के आधार पर फ़ैसला करेगी | आपके लिए एक वकील से बात करके यह तय करना ज़रूरी है कि अब कौन-सा क़दम उठाया जाए |

अगर पुलिस आपको गिरफ़्तार करती है तब उसके पास आपको 24 घंटों तक हिरासत में रखने का अधिकार है | लेकिन उससे अधिक समय तक हिरासत में रखने के लिए उसको अदालत की इजाज़त चाहिए |

जब आप किसी "ज़मानत योग्य" अपराध के लिए गिरफ़्तार होते हैं, तब अगर आप ऐसी औपचारिक शर्तों को मानने को तैयार हों जो अदालत या पुलिस आपके सामने रखे तो आप रिहा किए जाने के हक़दार हैं | लेकिन अगर आप पर "ग़ैरज़मानती" अपराध का मुक़दमा लगाया गया है तब ज़मानत इस पर निर्भर करेगी कि जज इसे मामले के लिए उपयुक्त मानते हैं या नहीं |

इन फ़ैसलों को लेने के लिए कोई वैधानिक नियम या दिशानिर्देश नहीं हैं जिनका अदालतें पालन करती हैं, सिवाय इस आम परंपरा के कि अधिकतम सात साल की क़ैद की सज़ा वाले मामलों में आम तौर पर गिरफ़्तारी नहीं की जानी चाहिए | लेकिन इसके आगे हर मामले पर उसकी अपनी स्थितियों के मुताबिक़ फ़ैसला किया जाता है और आपका क़ानूनी पक्ष किस तरह रखा जाता है, यह आपकी ज़मानत याचिका के नतीजे को बहुत अधिक निर्धारित करता है |

आईपीसी की एक प्रति हासिल करें और कुछ ज़मानती और ग़ैरज़मानती अपराधों की पहचान करें |

ज़मानत याचिकाएँ ख़ारिज होने से यह मामला हमेशा के लिए ख़त्म नहीं हो जाता है | कुछ समय बाद आप इसी अदालत में फिर से ज़मानत की याचिका दाखिल कर सकते हैं और यह दिखा सकते हैं कि पिछली बार की तुलना में हालात बदल गए हैं | या फिर आप ज़मानत की शुरुआती याचिका ख़ारिज होने के ख़िलाफ़ किसी ऊँची अदालत (सर्वोच्च अदालत समेत) में जा सकते हैं और इस ऊँची अदालत को यह यक़ीन दिलाने की कोशिश कर सकते हैं कि पुराने आदेश ग़लत थे |

गिरफ़्तारी और हिरासत आम तौर पर आरोपित व्यक्ति से पूछताछ करने के लिए किए जाते हैं | इससे हम इस मुद्दे पर पहुँचते हैं कि एक जाँच-पड़ताल के दौरान पुलिस की पूछताछ की प्रक्रिया में किसी व्यक्ति के पास कौन-से अधिकार होते हैं |

संविधान अपने ख़िलाफ़ गवाही देने को मजबूर किए जाने के ख़िलाफ़ अधिकार की गारंटी करता है | इससे जवाब हासिल करने के लिए ताक़त का इस्तेमाल करने से ही बचाव मिलता है | यहाँ यह ज़िम्मेदारी आरोपित पर आती है कि वह आगे चल कर यह साबित करे कि उसे बोलने के लिए मजबूर किया गया था |

जब आप हिरासत में न हों, ऐसी हालत में पूछताछ के दौरान क़ानूनी सलाह का अधिकार लगभग नहीं है | हिरासत में पूछताछ का सामना कर रहे व्यक्तियों के लिए भी यह बस नाम भर के लिए ही है | इन चिंताओं को दूर करने वाली एक ही बात है वो यह कि चाहे कोई व्यक्ति हिरासत में हो या नहीं, उसके द्वारा पुलिस को दिया गया कोई भी बयान सच्चाई के सबूत के रूप में स्वीकार्य नहीं है, चाहे यह जुर्म का क़बूलनामा ही क्यों न हो |

सुनवाई के संदर्भ में, अधिकारों के लिहाज़ से एक आरोपित व्यक्ति के पास सबसे महत्वपूर्ण अधिकार इन्हें माना जा सकता है:

- अदालत में गवाह के रूप में पेश होने या न होने का फ़ैसला करने का अधिकार
- अदालत द्वारा पूछे गए सवालों के जवाब देने का कर्तव्य
- सभी गवाहों से सवाल करने का अधिकार

इनमें से कोई भी या सभी अधिकारों पर अमल करने के लिए, और अदालत के सवालों के जवाब देने के कर्तव्य का पालन करने के लिए, क़ानूनी मदद की ज़रूरत होती है ताकि अपने द्वारा किए जाने वाले फ़ैसलों के नतीजों को आप पूरी तरह से समझ सकें |

मुफ़्त क़ानूनी मदद के योग्य कौन लोग हैं, यह जानने के लिए क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 का अध्याय चार पढ़ें |

जहाँ तक क़ानूनी सहायता की बात है, संविधान इसका अधिकार देता है कि कोई भी व्यक्ति अपनी पसंद के वकील की मदद ले सकता है और जहाँ कोई व्यक्ति वकालत का ख़र्च नहीं उठा सकता वह क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 के तहत मुफ़्त क़ानूनी सहायता हासिल कर सकता है, जिसका ख़र्च सरकार उठाती है | अलग-अलग राज्यों में मुफ़्त क़ानूनी सहायता हासिल करने की प्रक्रिया अलग-अलग है | जिस अदालत में किसी आरोपित व्यक्ति को पेश किया जा रहा है, उस अदालत का फ़र्ज़ है कि वह उसे मुफ़्त क़ानूनी मदद के अधिकार के बारे में सूचित करे |

ख. अगर आप आरोप लगाना चाहते हैं

मान लीजिए आप धृविका हैं और आपके साथ जो ग़लत किया गया था उसका इंसाफ़ पाने के लिए आपको आपराधिक न्याय प्रक्रिया की मदद लेनी है | शुरुआत में ही आपको कुछ फ़ैसले करने पड़ेंगे | अगर आपको लगता है कि आपके मामले को साबित करने के लिए आपके पास सारे सबूत हैं, आपको अपने जान पर आरोपित व्यक्ति से कोई फ़ौरी ख़तरा नहीं है, तब आपको एफ़आईआर लिखाने या ऐसे किसी दस्तावेज़ की ज़रूरत नहीं है (जैसे आज कई बीमा कंपनियाँ कार चोरी के मामले में बीमा के मामले पर कार्रवाई करने के लिए पुलिस केस ज़रूरी मानती हैं), तब आप पुलिस के पास न जाकर सीधे अदालत में ही शिकायत दर्ज करा सकते हैं | अदालत शिकायत की पड़ताल करती है और अगर उसको लगता है कि सुनवाई करने के लिए पर्याप्त आधार है, तब यह आरोपित को बुलावा (समन) भेज सकती है | इसके बाद उस सवाल का जवाब तलाशने की कार्रवाई शुरू होती है, जिसका ज़िक्र हमने ऊपर किया था |

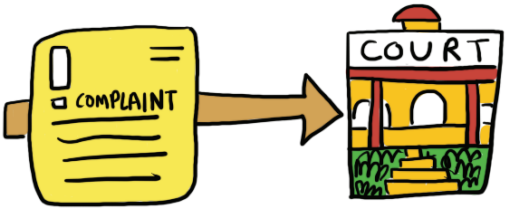

अगर आप सीधे अदालत नहीं जा सकते, तब आपके सामने पुलिस के पास जाकर शिकायत दर्ज कराने का उपाय ही है | शिकायत दर्ज कराना आम तौर पर पहला क़दम होता है, जिसके बाद आपको पुलिस थाने जाकर संबद्ध अधिकारी के सामने तथ्यों को समझाना पड़ता है | आप उम्मीद कर सकते हैं कि अधिकारी एफ़आईआर दर्ज कर लेंगे | अगर वे ऐसा नहीं करते हैं तब आपको जिला स्तर के ऊँचे अधिकारी को लिखना चाहिए | अगर इससे भी कोई नतीजा नहीं निकलता है, तब आप अंतिम उपाय के रूप में संबद्ध अदालत में एक आवेदन देकर माँग कर सकती हैं कि पुलिस को एफ़आईआर दर्ज करने के आदेश दिए जाएँ |

एक बार एफ़आईआर दर्ज हो जाने के बाद, पुलिस जाँच-पड़ताल अपने हाथ में ले लेती है और एक पीड़ित के रूप में आपकी भूमिका होती है

- मामले को अदालत ले जाने के लिए उन्हें आप जो भी मदद दे सकें, दें
- उपलब्ध सबूतों को उन्हें सौंपें
- पुलिस और अगर ज़रूरी हो तो अदालत को अपना बयान दें (अदालत को दिया गया बयान अधिक भरोसेमंद माना जाता है)

आपके पास

- आरोपित अगर ज़मानत की याचिका दाखिल करता है तो उसका विरोध करने का अधिकार है
- मुआवज़ा माँगने का अधिकार है

सीआरपीसी में मुक़दमे के अंत में मुआवज़े का प्रावधान है, लेकिन कई राज्यों में सुनवाई ख़त्म होने से पहले ही अंतरिम मुआवज़े के नियम हैं |

मुआवज़े को लेकर अपने राज्य के प्रासंगिक नियमों को देखें |

अगर जाँच के बाद पुलिस इस नतीजे पर पहुँचती है कि कोई मामला नहीं बनता है, तब क़ानून यह माँग करता है कि मामले को पूरी तरह से बंद करने से पहले पीड़ित की बात सुनी जाए | अदालत के लिए ज़रूरी है कि वह आपको इसका उचित मौक़ा दे कि आप यह दिखा सकें कि मामले की सुनवाई क्यों ज़रूरी है | सुनवाई के दौरान अगर मामला अदालत में आपकी शिकायत के आधार पर बना था, तब अधिकतर मामलों में अभियोजन का नियंत्रण आपके हाथों में होता है | अगर सुनवाई पुलिस की जाँच के आधार पर शुरू होती है, तब अभियोजक ही मुख्य वकील होते हैं और पीड़ित सुनवाई में अभियोजक की मदद कर सकती हैं |

आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़ी जगहें

आपराधिक न्याय व्यवस्था से गुज़रते हुए सिर्फ़ अपने अधिकारों और क़ानून के बारे में जान लेना ही काफ़ी नहीं है | उन सचमुच की जगहों को जानना भी उतना ही ज़रूरी है जहाँ हमें आने-जाने की ज़रूरत पड़ती है | इसमें शामिल हैं अदालतें और अदालत परिसर, पुलिस थाना, वकील का दफ़्तर और जेल | कुछ और जगहें भी इसका हिस्सा हो सकती हैं |

इस सेक्शन में हम पुलिस थाने की बात करेंगे | भारत में पुलिस और क़ानून लागू करने वाली संस्थाओं का मामला आम तौर पर राज्य सरकारों के हाथों में होता है, इसलिए इसकी कोई एक तस्वीर नहीं हो सकती है कि पुलिस थाने कैसे होते या दिखते हैं | वहाँ के लोग कैसे होते हैं, और वे कैसे काम करते हैं | इसके बावजूद कुछ बातें सबमें समान होती हैं, जिनकी हम पहचान कर सकते हैं |

प्रशासनिक मक़सद से हरेक राज्य को ज़िलों में बाँटा गया है, और हरेक ज़िले के भीतर पुलिस थाने होते हैं जो अधिकारियों की सुविधा के हिसाब से काल्पनिक क्षेत्रीय सीमाओं में बँटे होते हैं |

यह जानना एक महत्वपूर्ण काम है कि कौन-सा इलाक़ा किस पुलिस थाने के तहत आता है क्योंकि अगर आपको ज़रूरत पड़ी तो शिकायत लिखवाने के लिए वहीं जाना होगा |

यह जानने के लिए आप 100 या 112 पर फ़ोन कर सकते हैं कि आप किस पुलिस थाने की सीमा में रहते हैं |

हरेक पुलिस थाने का नेतृत्व एक अधिकारी करते हैं जिन्हें क़ानून में स्टेशन हाउस ऑफ़िसर या थाना प्रभारी कहते हैं | संक्षेप में उन्हें एसएचओ भी कहते हैं | आम तौर पर वे इन्स्पेक्टर स्तर के अधिकारी होते हैं (जिनके कंधों पर तीन सितारे लगे होते हैं) | एसएचओ की मदद के लिए सब-इन्स्पेक्टर या एसआई (कंधे पर दो सितारों वाले), सहायक सब-इन्स्पेक्टर या एएसआई (कंधों पर एक सितारे वाले), मुख्य कॉन्स्टेबल (ऊपरी आस्तीन पर शेवरॉन जैसे दो निशान) और कॉन्स्टेबल होते हैं | आम तौर पर जाँच-पड़ताल का नेतृत्व एएसआई या उनसे ऊपर के अधिकारी करते हैं |

समानताओं की बात करें तो हरेक थाने में आम तौर पर एक हवालात होता है, जहाँ किसी मामले से संबद्ध व्यक्ति को हिरासत में लेने के बाद 24 घंटों तक रखा जा सकता है - और अगर सक्षम अदालत ने इजाज़त दे दी तो उसके बाद भी | हरेक पुलिस थाने में कम से कम एक महिला पुलिस अधिकारी का होना भी ज़रूरी है |

अगर आपके साथ कोई अपराध हुआ है और आपको रिपोर्ट लिखानी है, तब संभावना यही है कि आपको ड्यूटी ऑफ़िसर (सेवारत अधिकारी) की मेज़ पर भेज दिया जाएगा | यह वो पुलिसकर्मी होता है जो जनरल डायरी या रोज़नामचा भरने के लिए ज़िम्मेदार होता है | यह पुलिस थाने के प्रवेश द्वार के पास स्थित होता है | यह डायरी थाने में होने वाली घटनाओं का आधिकारिक रेकॉर्ड होती है | इसमें थाने में आनेवाले हरेक पीड़ित, हरेक अधिकारी की गतिविधि, हरेक मामले के रजिस्ट्रेशन को दर्ज किया जाता है | ड्यूटी अधिकारी आम तौर से आपको अपनी शिकायत लिख कर जमा कराने को कह सकता है | या फिर वह आपसे कह सकता है कि आप उसे अपनी शिकायत बताएँ जिसके आधार पर वह इसे लिख लेगा |

इस प्रक्रिया का नतीजा यह होता है कि आपकी शिकायत को रजिस्टर में एक सीरियल नंबर मिल जाता है | यह आपकी शिकायत का पहला आधिकारिक रेकॉर्ड होता है | आम तौर पर इसको डायरी नंबर के नाम से जाना जाता है | यह आपकी शिकायत से जुड़े आगे के सभी संवादों में एक संदर्भ का काम करता है | ध्यान दें कि डायरी नंबर मिलने का मतलब यह नहीं है कि एफ़आईआर दर्ज हो गई है | अभी कई क़दम बाक़ी हैं - हम इन्हें बताने जा रहे हैं |

आपने जिस अपराध का आरोप लगाया है, उसकी गंभीरता के आधार पर आपकी शिकायत को संभव है कि पुष्टि के लिए थाने के किसी अधिक वरिष्ठ अधिकारी के पास भेज दिया जाए | पुष्टि की इस प्रक्रिया को आरंभिक जाँच भी कहा जाता है, और कई बार इसको पूरा करने में हफ़्तों लग जाते हैं | अगर पुलिस अधिकारी आपकी शिकायत को इसके योग्य मानते हैं, तब पुष्टि के अंत में एफ़आईआर दर्ज कर ली जाती है |

?

इस सेक्शन के आधार पर उन व्यक्तियों, कार्यवाहियों और दस्तावेज़ों की एक सूची बनाएँ जिनसे आपकी मुलाक़ात होने की संभावना है | अपने स्थानीय पुलिस थाने में जाएँ और देखें कि आप उनमें से कितनों की पहचान कर सकते हैं |

पुनश्च

जिस समय इस दस्तावेज को तैयार किया जा रहा था, उस समय भारतीय आपराधिक क़ानूनों की तिकड़ी की जगह नए क़ानून लाए गए: भारतीय न्याय संहिता 2023 (बीएनएस) [जिसने भारतीय दंड विधान 1860 की जगह ली], भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023 (बीएनएसएस) [जिसने आपराधिक विधि विधान 1973 की जगह ली] और भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 (बीएसए) [जिसने भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की जगह ली] | इन क़ानूनों को संसद में पारित किया जा चुका है, लेकिन वे अभी लागू नहीं हुए हैं | सरकार इन्हें एक ही साथ लागू कर सकती है या जैसा कि अधिक संभावना है, उन्हें अंशों में नोटिफ़ाई करके धीरे-धीरे लागू कर सकती है |

इन नए क़ानूनों के आने से कुछ महत्वपूर्ण सवाल उठ खड़े हुए हैं | हमारे लिए सबसे बड़ा सवाल यह है कि हमने जो दस्तावेज पढ़े क्या वे बेकार हो गए? अच्छी बात यह है कि हम साफ़-साफ़ कह सकते हैं कि ऐसा नहीं है | नए क़ानूनों ने आपराधिक न्याय प्रक्रियाओं के ढाँचे और कामकाज को बहुत नहीं बदला है | और जब तक वे लागू किए जाएँगे तब तक हमारा जीवन मौजूदा क़ानूनों यानी आईपीसी, सीआरपीसी, और आईईए के मुताबिक़ ही चलेगा जिन्हें हमने पढ़ा है | नए क़ानूनों के लागू हो जाने के बाद भी, पुराने क़ानूनों के रहते हुए जो प्रक्रियाएँ शुरू हुई थीं वे भी पुराने क़ानूनों के मुताबिक़ ही पूरी की जाएँगी |

नए क़ानून आपराधिक न्याय प्रक्रिया में जिस तरह के बदलाव लेकर आए हैं, उनसे भी हम उसी तरह पेश आएँगे जैसे कि इस दस्तावेज़ में हमने सीखा है | पहले हम यह देखेंगे कि अगर हम इस प्रक्रिया के फंदे में पड़ गए हैं तो क्या होगा | और फिर उसके बाद अगर हमें अपनी शिकायत का निबटारा करने के लिए मामला दर्ज कराना पड़े तो क्या करना होगा |

बीएनएसस में जाँच-पड़ताल के कुछ हिस्सों पर समय-सीमा लागू की गई है, उम्मीद यह की गई है कि इससे प्रक्रिया की गति तेज़ होगी | इस संरचना के बारे में कोई बदलाव नहीं किए गए हैं कि जाँच-पड़ताल और सुनवाई किस तरह चलाई जाएगी | इसी तरह, गिरफ़्तारी के बारे में पुलिस की शक्तियों में कोई बदलाव नहीं किए गए हैं | लेकिन ऐसा लगता है कि किसी लंबित जाँच-पड़ताल के दौरान व्यक्तियों को हिरासत में रखने के जजों के अधिकार का विस्तार किया गया है |

पीड़ितों के लिए बीएनएसएस में इस बात को आसान बनाया गया है कि वे मामलों को कहाँ दर्ज करा सकते हैं | इसमें 100/112 पर कॉल करके शहर का कौन-सा हिस्सा किस थाने के तहत आता है यह पता लगाने की ज़रूरत घटा दी गई है, ताकि यह फ़ैसला किया जा सके कि मामले को कहाँ दर्ज कराया जाए | प्रक्रिया को तेज़ करने के लिए लगाई गई समय सीमा पीड़ित की भी मदद करेगी | लेकिन इसी के साथ, इंसाफ़ चाहने वाले पीड़ितों के लिए कुछ नई बाधाएँ भी हैं | अगर आप पुलिस के पास न जाकर सीधे अदालत में शिकायत दर्ज कराते हैं, तब बीएनएसएस ने यह ज़रूरी बना दिया है कि अदालत आपकी शिकायत पर कोई भी कार्रवाई करने से पहले आरोपित को भी सुने |

अगर आप पुराने और नए क़ानूनों के अंतरों और समानताओं के बारे में और जानने में रुचि रखते हैं तो मॉडर्न क्रिमिनल लॉ रिव्यू वेबसाइट पर india लेबल से दी गई सामग्री को देखें | यहाँ एक ही पेज पर विभिन्न क़िस्म की सामग्री जमा की गई है |
https://crimlrev.net/mclr-resources-2/

शब्दावली

अग्रिम ज़मानत:
जब किसी व्यक्ति को पता लगता है कि उसके ख़िलाफ़ एक गिरफ़्तार किए जा सकने वाले (संज्ञानात्मक) और ग़ैर ज़मानती अपराध करने के आरोप लगाए गए हैं, तब वह इसके लिए आवेदन कर सकता है | इसके नतीजे में पुलिस को यह निर्देश दिया जाता है कि अगर वे उस व्यक्ति को गिरफ़्तार करने वाले हों तो उसे अनिवार्य तौर पर ज़मानत दी जाए |

संज्ञानात्मक अपराध :
ये ऐसे अपराधों को कहा जाता है जिनमें पुलिस के पास बिना वारंट के गिरफ़्तार करने का अधिकार होता है | निशा पर जिस क़िस्म के अपराध का आरोप लगाया गया था, ऐसे गंभीर अपराधों में पुलिस को बिना किसी वारंट के गिरफ़्तार करने का अधिकार है |

न्यायिक वारंट
ये ऐसे दस्तावेज होते हैं जो पुलिस को किसी व्यक्ति या वस्तु की गिरफ़्तारी, तलाश और ज़ब्ती के अधिकार देते हैं | सबूतों की पड़ताल और संभावित कारण पाने के बाद कोई मजिस्ट्रेट या जज इनको जारी कर सकता है | भारत में न्यायिक वारंट कई क़िस्म के हो सकते हैं जैसे कि गिरफ़्तारी वारंट, तलाशी वारंट, प्रस्तुति वारंट, या रिमांड वारंट |

मुक़दमा और अभियोजन
किसी अपराध को करने के आरोपित व्यक्ति के ख़िलाफ़ की गई क़ानूनी कार्यवाही और कार्रवाइयाँ | अंग्रेज़ी के prosecution शब्द का उपयोग दोनों अर्थों में होता है | यह सुनवाई की प्रक्रिया को बताने के लिए उपयोग में तो लाया ही जाता है, जज के सामने आरोपित व्यक्ति को अपराध का क़सूरवार बताते हुए मामला पेश करने वाले क़ानूनी पक्ष को भी यही कहा जाता है | हिंदी में इनके लिए दो अलग-अलग शब्द क्रमशः मुक़दमा और अभियोजन प्रचलन में हैं |